RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-03
Issue-08
August-2018

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का विकास

डॉ0 संजय कुमार मिश्रा

हिन्दी विभाग वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

परिचय

हिन्दी ही सभी भारतीय भाषाओं में एक भाषा थी जिसका सार्वदेशिकता को राष्ट्रभाषा का गौरव आसानी से प्रदान किया जा सकता था। राष्ट्र के नेता राष्ट्रीय भाषा के रूप में हिन्दी को छोड़कर किसी दूसरी भाषा की कल्पना नहीं कर सकते थे। जिन राष्ट्रीय उदेश्यों से एक सार्वदेशिक भाषा की आवश्यकता उन्हे महसूस हुई उसकी पूर्ति के लिए उन्हे हिन्दी के आलावा कोई दूसरी भाषा नजर नहीं आई। हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित करनेवालों में अहिन्दी–प्रदेश के नेता ही अगिम्र पंक्ति में थे। राष्ट्रीय जागरण और स्वाधीनता–संग्राम का रूप ज्यो–ज्यों प्रौढ़ होता गया वैसे–वैसे राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी के विकास की संभावनाएँ भी प्रशस्त होती गई।

बीसवी शताब्दी के प्रारंभ से राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी के विकास पर नजर डालने पर हम पाते हैं कि भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलनों में नई प्रवृतियों का प्रारंभ बींसवी शती के प्रथम दशक से ही होने लगा। सर्वप्रथम शिक्षा के क्षेत्र में क्रांति हुई। यह विश्वास पैदा हुआ कि अंग्रेजी के बिना भी उच्च शिक्षा दी जा सकता है। शिक्षा के क्षेत्र में राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीयकरण की इस भावना से देश में स्वराज्य की भावना पैदा हो गई। दादाभाई नौरोजी ने स्न 1906 में कांग्रेस की नीति स्वराज्य की मार्ग पर अधिक दृढ़ हो गई। इसी संदर्भ में गांधीजी का पदार्पण भारतीय राष्ट्रीय जगत में हुआ। उन्होंने देश की राजनीति में भाग लेना प्रारंभ किया। पंजाब में जलियावाला बाग हत्याकांड के बाद विक्षोभ की लहर दौड़ पड़ी और गांधी जी ने अंग्रेजी सता के विरूद्ध एक अहिंसात्मक युद्ध की घोषणा कर दी। संपूर्ण देश में असहयोग आंदोलन शुरू हुआ। स्वभाषा के महत्व को स्वदेशी आन्दोलन के संदर्भ में महसूस किया जाने लगा। हिन्दी को कांग्रेस के नेतृत्व में एक अखिल भारतीय महत्व की भाषा समझा जाने लगा। चूंकि कांग्रेस का नेतृत्व गांधी जी कर रहे थे, अतः भाषा के प्रशन पर उनके विचारों का व्यापक प्रभाव पड़ा। सन् 1924 में काग्रेस का उन्तालीसवां अधिवेशन बेलगांव में हुआ। इसके सभापति गांधीजी नें कांगेस के कार्यक्रमों में हिन्दी के प्रचार–कार्य को भी सम्मिलित करवाया। इसी के परिणामस्वरूप कांगेस के 40वें अधिवेशन में कानपुर में हिन्दी संबंधित निम्न प्रस्ताव प्रस्तावित किया गया –

"यह कांग्रेस तय करती है कि (विधान 33वीं धारा के नीचे लिखे अनुसार सुधार जाए) कांग्रेस का, कांग्रेस की महा–समिति का कामकाज आम तौर पर हिन्दुस्तानी में चलाया जाएगा।"

कांग्रेश द्वारा ऐसा महत्वपूर्ण निणर्य करना हिन्दी के व्यापक प्रचार के लिए बड़ा ही सहायक बना। इस प्रकार धीरे–धीरे हिन्दी को निर्विवाद रूप से 'राष्ट्रभाषा हिन्दी' की मान्यता दी जाने लगी।

इस प्रकार देश की एकता को कायम रखने के लिए एक सामान्य भाषा के रूप में किसी देशी भाषा की प्रतिष्ठा का प्रशन स्वातन्त्रय– संग्राम के साथ ही उठा था। राष्ट्र के सच्चे उन्नयकों ने हिन्दी का पक्ष–समर्थन किया था। राष्ट्रभाषा का प्रश्न चूंकि राजनीति के साथ सम्पृक्त हो गया था इसलिए प्रत्येक राजनीतिक उपक्रम के साथ ही इस प्रश्न को ओर भी ध्यान दिया जाता रहा। 'नृसिंह' पत्रिका ने पहले ही अंक में इस प्रश्न को उठाया। इस अंक में 'राष्ट्रभाषा' शीर्षक सम्पादकीय लेख के उपसंहार का एक स्थल इस प्रकार है–

"जो लोग अंग्रेजी नहीं जानते वे न तो कांग्रेस में जाते हैं और न उसके उदेश्यों को ही भलीभाँति समझते हैं। गत दिसम्बर में जों कांग्रेश में जाते हैं और न उसके बैठकों में अंग्रेजी न जानने वाले अनेक मारवाड़ी भी उपस्थि होते थे। पर अंग्रेजी की उपयुक्त योग्यता न होने के कारण उन्हें वहाँ कुछ आनन्द न मिलता था। अन्त को हिन्दी समाचारपत्रों द्वारा जो कुछ थोड़े बहुत समाचार मिले। उन पर ही उन्हें संतोष करना पड़ा। यदि आज समस्त भारत के लिये सार्वजनिक अथवा राष्ट्रभाषा होती, तो विदेशी व्यापार में लिप्त मारवाड़ी भी देश की दुदशा का समस्त वर्णन अपने कानों सुन कर परिणाम में सत्यनाशी विदेशी वाणिज्य को तिलांजलि दे देतें। इसके सिवाय समस्त देश में एकता उतपन्न करने के लिए जिन तीन बातों की आवश्यकता होती है, उनमें सार्वजनिक भाषा ही प्रधान है। हमारा यह सिद्धांत कदापि नहीं हैं कि इन तीन बातों के बिना एकता सम्पादित नहीं हो सकती। यदि किसी प्रकार समस्त देश में सार्वजनिक भषाा कर सकें तो हमारा काम बहुत ही सरल हो जाय। भिन्न–भिन्न प्रांतो में परस्पर प्रेम और सहानुभूति के जो अंकुर उगे हैं वे विशेषतः विद्वमण्डली से ही परिविष्ट है। अब समय आ गया है, कि समस्त भारतवासी विद्वान अथवा मूर्ख तन, मन, धन से स्वदेशोन्नति के लिए कमर कस कर खड़े हो जाये। पर सर्वसाधारण को जगाने का काम विदेशी भाषा से कभी सम्पन्न नहीं हो सकता, उसके लिए राष्ट्रभाषा का प्रयोजन है..... पर 'राष्ट्रभाषा' की गदी सबको

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

नही दी जा सकती, वह एक को मिलेगी। समस्त भारत के 30 करोड़ मनुष्यों में 6 करोड़ मनुष्यों की मातृभाषा हिन्दी हैं। यदि इसमें मुसलमानी हिन्दी बोलने वालों की संख्या भी जोड़ दी जाय, तो आठ करोड़ मनुष्यों की मातृभाषा हिन्दी हो जाती है। शेष 22 करोड़ मनुष्य मिल कर 10 भाषाएं बोलते है। पंजाबी गुजराती भाषाएं हिन्दी से बहुत मिलती जुलती हैं। दोनों प्रांतों के निवास हिन्दी भली–भांति समझते हैं।"

'सरस्वती' के संपादक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी तथा इसके कई लेखकों ने भी हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया। इस पत्रिका के एक प्रमुख लेख माधव राव 'सप्रे' ने अहिन्दीभाषी होने के बावजूद हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने का आह्वान किया। उन्होंने अहिन्दी भाषी जनता से अपील की कि वे हिन्द को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करें। उन्होंने इसका कारण बताते हुए लिखा है–

"हमारी राय में हिन्दी ही एक ऐसी भषा है जिसे साधारण लोग बहुत शीघ्रता से सीख और पढ़ सकते है। और जिसका व्यवहार देशभर में सुगमता के साथ किया जा सकता है। उतर हिन्दुस्तान में, पंजाब से लेकर ब्रह्म देश तक यह भषा बोली जाती है और इसे सब लोग समझते भी है। पंजाबी और बंगाली भाषाएं हिंदी से बहुत बहुत कुछ मिली जुलती है। मारवाड़, मध्य भारत, मध्य प्रदेश, बरार और गुजरात में भी हिन्दी भाषाभाषी लोग बहुत हैं। खास महाराष्ट्र पांत में भी इस भाषा से लोग अपरिचित नहीं है। अतः हिंदी ही ऐसा भाषा है जो दूसरी भारतीय भाषाओं से संबंध सूत्र स्थापित करके राष्ट्रभाषा के गौरव को प्राप्त कर सकती है।"

तिलक द्वारा राष्ट्रभाषा के प्रश्न को राष्ट्रीय आन्दोलन में बड़ा बल मिला। उनका विचार था कि हिंदी ही एकमात्र भाषा है जो राष्ट्रभाषा हो सकती है। हिन्दी का समर्थन करते हुए उनका कथन है–"यह आन्दोलन उतर भारत में केवल एक सर्वमान्य लिपि के प्रचार के लिए नहीं है। यह तो उस आन्दोलन का एक अंग है, जिसे मैं राष्ट्रीय आन्दोलन कहूंगा और जिसका उदेश्य समस्त भारतवर्ष के लिए एक राष्ट्रभाषा की स्थापना करना है, क्योंकि सबके लिए समान भाषा राष्ट्रीय का महत्वपूर्ण अंग है। अतएव यदि आप किसी राष्ट्र के लोगों को एक दूसरे के निकट लाना चाहें तो सबके लिए समान भाषा से बढ़कर सशक्त अन्य कोई बल नहीं है।"

तिलक जहाँ हिन्द को राष्ट्रभाषा मानते थे वहाँ देवनागरी को लिपी मानते थे। तिलक ने राष्ट्रीय चेतना को प्रबल करने के लिए सन् 1903 में 'हिन्दी केसरी' नामक पत्रिका का प्रकाशन भी आरंभ कर दिया। अपने विचारों को जनसाधारण तक पहुंचाने के लिए 'हिंदी केसरी' का प्रकाशन करके तिलक ने इस बात का परिचय दिया कि देश के सामान्य जन तक पहुंचने के लिए केवल 'हिन्दी' ही एक सरल एवं सशक्त माध्यम है। राष्ट्रभाषा हिन्दी के आन्दोलन को सशक्त बनाने में तिलक का बड़ा योगदान रहा है।

मदनमोहन मालवीय ने भी राष्ट्रभाषा हिन्दी के विकास में बड़ा योगदान दिया। इन्होंने हिन्दी साप्ताहिक 'अभ्युदय' प्रारंभ किया जो 8 वर्ष बाद दैनिक के रूप में निकलने लगा। इसके अतिरिक्त मालवीय जी ने सन् 1910 में प्रयाग से 'मर्यादा' नामक हिन्दी मासिक पत्रिका और सन् 1933 से –सनातन धर्म' नामक हिन्दी पत्र भी प्रारंभ कर दिया। मालवीय जी की प्रेरणा से और भी हिन्दी पत्रिकाओं का जन्म हुआ। गांधिजी को भारत के राजनीतिक जीवन में प्रवेश करने के पूर्व ही यह विश्वास हो गया था कि जब तक अंग्रेजों के प्रति मोह बना रहेगा, तब तक भारत स्वाधीन नहीं होगा और जब तक हिन्दी का प्रचार संपूर्ण भारत में नहीं होगा तब तक देश की राष्ट्रीय एकता भी मजबूत नहीं होगी।

निष्कर्ष

'हिन्दी ही हिन्दुस्तान के शिक्षित समुदाय की सामान्य भाषा हो सकती है, यह बात निर्विवाद सिद्ध है। यह कैसे हो, केवल यही विचार करना है। जिस स्थान को अंग्रेजी भाषा आजकल लेने का प्रयत्न कर रही है और जिसे लेना उसके लिए असंभव है, वही स्थान हिन्दी को मिलना चाहिए क्योंकि हिन्दी का उसपर पूर्ण अधिकार है। यह स्थान अंग्रेजी को नही मिल सकता क्योकि वह विदेशी भाषा है और हमारे लिए बड़ी कठिन है। अंग्रेजी की अपेक्षा हिन्दी सीखना बहुत सरल है। बंगाल, बिहार, उड़िया, मराठी, गुजराती, राजस्थानी, पंजाबी और सिन्धी हिन्दी की बहिनें हैं। उक्त भाषाओं को बोलनेवाले थोड़ी–बहुत हिन्दी बोल और समझ लेते है। इन सबको मिलाने से संख्या प्रायः 22 करोड़ हो जाती है। जिस भाषा का इतना प्रचार है, उसकी बराबरी करने के लिए अंग्रेजी, जिसे एक लाख हिन्दुस्तानी भी ठीक–ठीक बोल नहीं सकते, क्योंकर समर्थ हो सकती है।"

गांधीजी का राष्ट्रभाषा के संबंध में दृढ़ मत यह था कि राष्ट्रभाषा का प्रयोग नहीं करना राष्ट्र की हत्या करने के बराबर है। राष्ट्रभाषा का प्रयोग राष्ट्रसेवा के लिए बहुत ही आवश्यक है। गांधी जी ने कहा –

"देश–सेवा करने के लिए उत्सुक सब हैं, परन्तु राष्ट्र–सेवा तक संभव नहीं जब–तक कोई राष्ट्र–भाषा न हो। दुख की बात है कि हमारे बंगाली भाई राष्ट्रभाषा का प्रयोग न करके राष्ट्रीय हत्या कर रहे हैं, जबकी इसके बिना देश की आम जनता के हृदयों तक नहीं पहुंचा जा सकता। इस अर्थ में बहुत लोगों के द्वारा हिन्दी को काम में लाया जाना मानवतावाद के क्षेत्र की बात हो जाती है।"

संदर्भसूची

1. सरस्वती, जनवरी 1907 ई.

© RRIJM 2015, All Rights Reserved